जनवरी-२०१६

कीमत ₹ १२/-

दादा भगवान परिवार का

अक्रम एक्सप्रेस

सुपर ह्यूमन

संपादकीय

बालमित्रों,

कई बार हम ऐसे व्यक्तियों के परिचय में आते हैं, जिन्हें लोग "देव" जैसा कहते हैं।

क्या कभी सोचा है कि जिन्हें लोग "देव" जैसा कहते हैं वे व्यक्ति कैसे होते होंगे?

नहीं?

तो यह अंक ज़रूर पढ़ें। इस अंक को पढ़ना आपको बहुत अच्छा लगेगा। और पढ़ने के बाद आप सभी नए ढंग से जीवन जीना शुरू करेंगे।

हाँ, सचमुच!

- डिम्पल मेहता

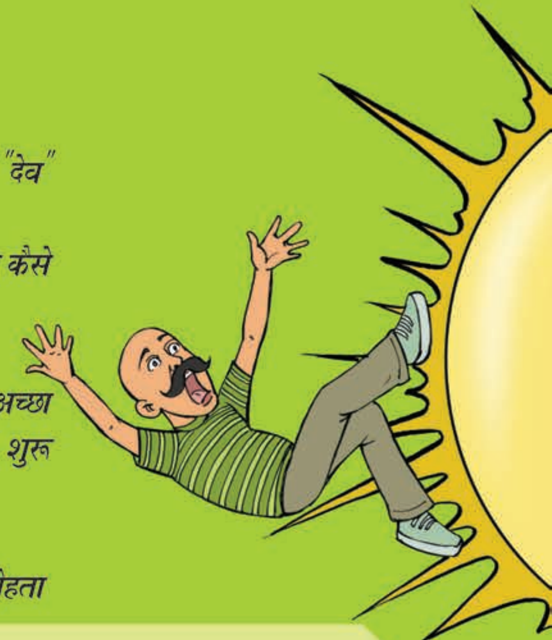

सुपर ह्यूमन
अक्रम एक्सप्रेस

संपादक :
डिम्पल मेहता
वर्ष : ३ अंक : १०
अखंड क्रमांक : ३४
जनवरी -२०१६

....

संपर्क सूत्र
बालविज्ञान विभाग
त्रिमंदिर संकुल, सीमंधर सिटी,
अहमदाबाद - कलोल हाइवे,
मु.पो. - अडालज,
जिला . गांधीनगर - ३८२४२१,
गुजरात
फोन : (०७९) ३९८३०१००
email:akramexpress@dadabhagwan.org
Website:
kids.dadabhagwan.org

Printed & Published by

Dimple Mehta on behalf of
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj-382421.
Dist-Gandhinagar.

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj-382421.
Dist-Gandhinagar.

Printed at
Amba Offset
Basement, Parshvanath Chambers, Nr.RBI,
Usmanpura, Ahmedabad-14.

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj-382421.
Dist-Gandhinagar.

वार्षिक सदस्यता(हिन्दी)
भारत :१२५ रुपये
यू.एस.ए. :१५ डॉलर
यू.के. :१० पाउन्ड
पाँच वर्ष
भारत : ५०० रुपये
यू.एस.ए. : ६० डालर
यू.के. : ४० पाउन्ड
D.D/ M.O 'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम पर भेजें।

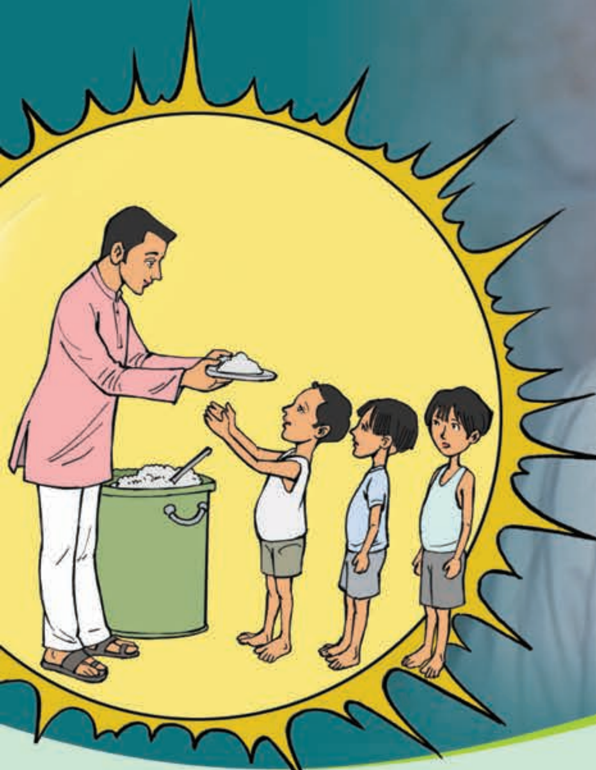

दादाजी कहते हैं...

दादाश्री : ह्यूमन किसे कहते हैं? जिसने सुख दिया हो उसे सुख दे, जिसने दुःख दिया हो उसे दुःख न दे। ऐसा व्यवहार करें, उसे मानवता कहते हैं।

प्रश्नकर्ता : "सुपर ह्यूमन" किसे कहते हैं?

दादाश्री : तुम दस बार किसी का नुकसान करो फिर भी वे तुम्हारे काम आएँ, तुम्हारी "हेल्प" करें! तुम फिर उनका नुकसान करो, फिर भी जब तुम्हारा काम हो तब वो तुम्हारी फिर से हेल्प करें। उनका स्वभाव ही हेल्प करना होता है। इससे हमें समझना चाहिए कि वे "सुपर ह्यूमन" हैं। वे अपकार के बदले उपकार करते हैं। यह दैवीय गुण कहलाता है।

स्वयं का सुख औरों को दे दें, स्वयं के पास आया हुआ सुख, खुद को ज़रूरत हो फिर भी दूसरों को दे दें, उन्हें सुपर ह्यूमन कहते हैं। वे देवगति में जाते हैं।

सुपर ह्यूमन होने पर ही निखालसता आती है। निखालस एकदम "प्योर" होते हैं। उन्हें एक भी "इमप्योर" विचार नहीं आता।

प्रश्नकर्ता : लोग निखालस व्यक्ति का दुरुपयोग करते हैं?

दादाश्री : नहीं, जो दुरुपयोग करने आता है, वह उनसे सौ फीट दूर ही रहता है। उसकी शक्ति टूट जाती है, फ्रैक्चर हो जाती है।

प्रश्नकर्ता : मनुष्य के कर्तव्य के बारे में कृपया आप कुछ कहें।

दादाश्री : जगत् दो प्रकार का है। एक तो मनुष्य जन्म लेने के पश्चात क्रेडिट इकट्ठी करता है और ऊँची गति में जाता है और जो डेबिट इकट्ठा करता है, वह नीची गति में जाता है और जो क्रेडिट-डेबिट दोनों का व्यापार बंद कर दे, उसे मुक्ति मिलती है।

अब जिसे मनुष्य बनना हो, उसे मानव धर्म अपनाना चाहिए। यदि हमें कोई दुःख दे तो हमें अच्छा नहीं लगता, तो हमें भी किसी को दुःख नहीं देना चाहिए। जिसे यह सिद्धांत जीवन के हर एक व्यवहार में फिट हो गया, उसे पूरी मानवता आ गई।

जो खुद का सुख दूसरे को देगा, वह सुपर ह्यूमन यानी देवगति में जाएगा और जो अनर्थ करे, खुद का कुछ फायदा नहीं हो फिर भी दूसरे का बहुत नुकसान कर दे वह नर्कगति में जाएगा। जो लोग अपने स्वार्थ के लिए अणहक्क का भुगतते हैं वे जानवर में जाते हैं।

इस दुनिया का नियम क्या है कि अगर
आपके खुद के फल दूसरों को दे देंगे
तो कुदरत आपका संभाल लेगी।

यह तो नई ही बात!

पाशवता के गुण जितने कम होते जाएँ और दैवीय गुण प्रकट होते जाएँ और ऐसे करते-करते पाशवता के गुण संपूर्ण खत्म हो जाएँ और दैवीय गुण संपूर्ण प्रकट हो जाएँ तो वही देवता है, वही ईश्वर।

यह लाइफ अगर परोपकार में बीतेगी तो आपको
कोई भी नुकसान या अड़चन नहीं आएगी।
आपकी जो भी इच्छाएँ हैं, वे सभी पूर्ण होंगी।

दादाजी की बात...

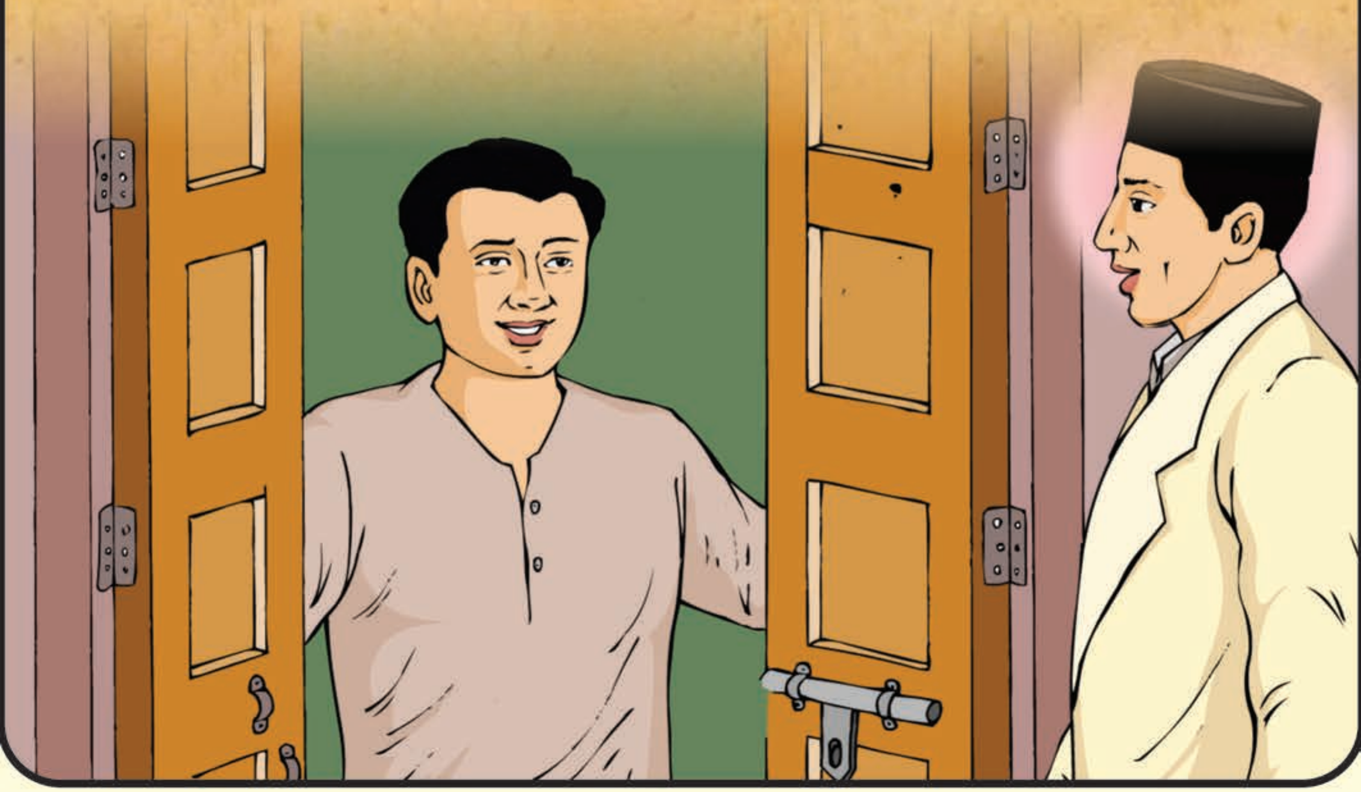

एक बार ऐसा हुआ कि दादाजी रात के बारह बजे एक मित्र के घर गए। इस पर उस मित्र को विचार आया कि रात के बारह बजे ये कभी नहीं आते, आज आए हैं ज़रूर कुछ पैसे-वैसे की ज़रूरत होगी। इसलिए मन ही मन दादाजी के लिए उनके भाव बिगड़ गए।

उनके चेहरे के बदले हुए भाव देखकर दादाजी समझ गए, इस काल में लोगों के भाव बिगड़ने में देर नहीं लगती, इसलिए बहुत विचार करने के बाद उन्होंने निर्णय लिया कि लोगों को ऐसे निर्भय कर दिया जाए कि जिससे उनके भाव ही न बिगड़ें।

इसलिए दूसरे ही दिन उन्होंने सभी दोस्तों को इकट्ठा करके कह दिया कि "तुम्हें किसी को भी मेरा काम करना ही नहीं है। इसलिए तुम मुझसे डरना नहीं।"

मित्रों ने पूछा, "ऐसा क्यों?"

दादाजी ने कहा, "मैं दो हाथवालों से कुछ माँगता ही नहीं, क्योंकि दो हाथवाले खुद ही दुःखी हैं। मैं उनसे कोई उम्मीद रखता ही नहीं। बल्कि मुझ से तुम आशा रखना। मुझ से तुम अपना काम करवा लेना। लेकिन मेरा काम मत करना।"

तब से लोग उन्हें सुपर ह्यूमन कहने लगे कि सुपर ह्यूमन के सिवाय ऐसा कोई नहीं बोल सकता।

फोर चेप्लिन्स

वर्ड वॉर-2 के समय की बात है। 2 फरवरी 1943 की रात थी। यू.एस.ए का "डोर चस्टर" नाम का जहाज ग्रीन लैंड की ओर जा रहा था। न्यूयॉर्क से 23 जनवरी को निकला हुआ जहाज अपने निर्धारित लक्ष्य ग्रीन लैंड से सिर्फ 150 मील दूर था।

उस समय, जहाज के कप्तान को उनके दुश्मन की तरफ से भय का सिग्नल मिला। जहाज में उपस्थित सभी सिपाहियों को कप्तान ने लाइफ-जैकेट पहनकर ही सोने का ऑर्डर दिया लेकिन लाइफ-जैकेट पहनकर सोना मुश्किल होने की वजह से सिपाहियों ने कप्तान के ऑर्डर की अवहेलना की।

रात के लगभग 12:55 का समय था। अमरीकी दुश्मनों ने डोर चस्टर जहाज पर एक टोरपीडो (जहाज को पानी में ही उड़ा देनेवाला एक विस्फोटक पदार्थ) फायर किया। जहाज के कप्तान ने सभी को चेतावनी दी कि करीब बीस मिनट में जहाज समुद्र में डूब जाएगा।

जहाज में भगदड़ मच गई। टोरपीडो के ब्लास्ट से बहुत जान-हानि हो गई और कई लोगों को गंभीर चोटें लगीं। एक के बाद एक सिपाही लाइफ बोट में कूद रहे थे।

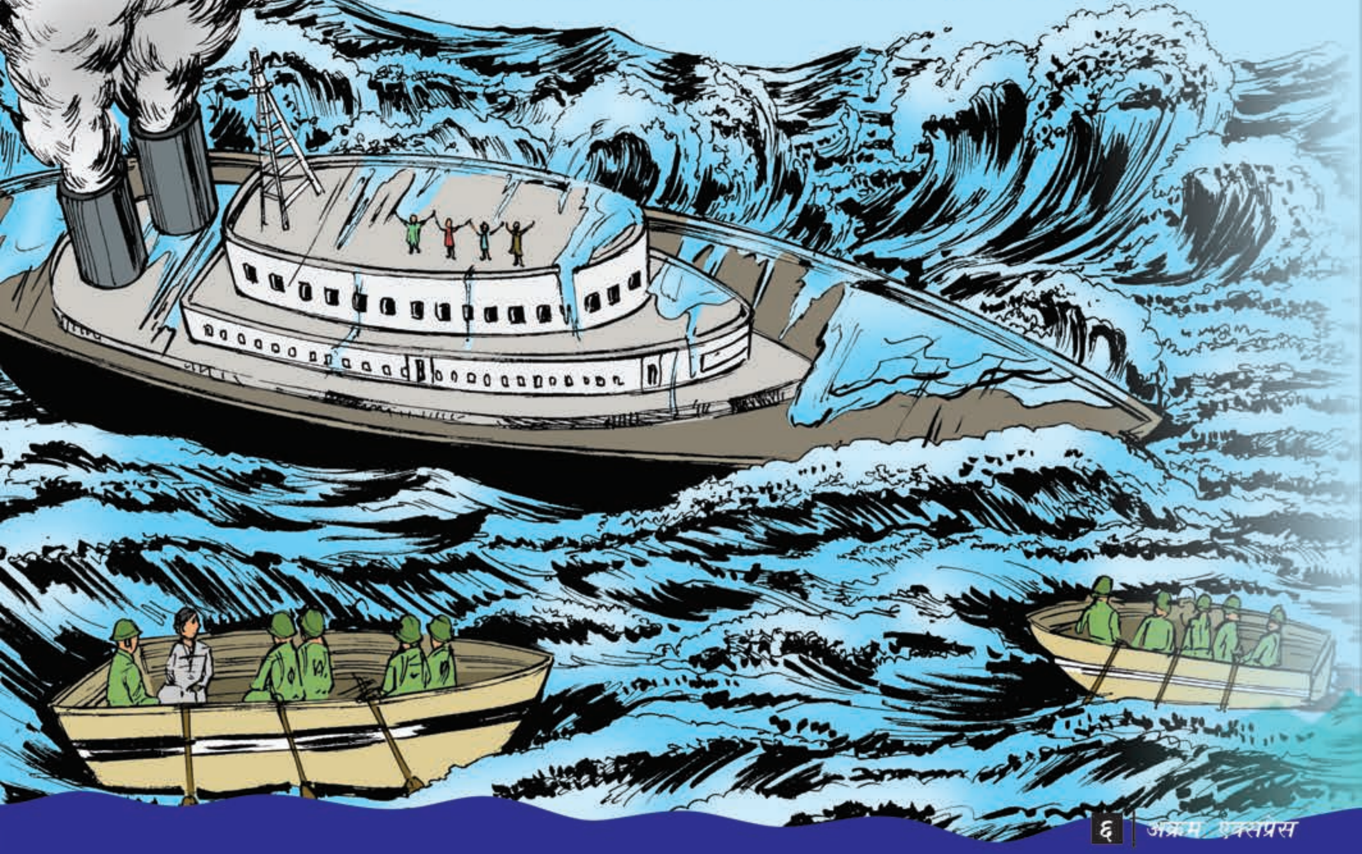

उस जहाज पर चार पादरी थे। वे चारों पादरी अलग-अलग धर्म के थे। जहाज पर मचनेवाली भगदड़ में वे पादरी एक आशा की किरण की तरह थे। मृतक सिपाहियों के लिए वे प्रार्थना कर रहे थे और जीवित सिपाहियों को हिम्मत दे रहे थे।

उस रात को याद करते हुए, सोल्जर विलियम बेडनार कहते हैं कि, "पादरियों के धैर्य और हिम्मत भरे शब्दों की वजह से ही आज मैं जीवित हूँ।"

एक और ऑफिसर जॉन महोनी कहते हैं कि, "उस रात मैं अपनी कैबिन में ग्लव्स भूल गया। इतनी कड़कड़ती सर्दी में ग्लव्स के बिना लाइफ बोट में जाना मुश्किल था। जब मैं कैबिन में जाने लगा तब एक पादरी ने रोककर मुझ से कारण पूछा और मेरा समय बचाने के लिए तुरंत ही उन्होंने अपने ग्लव्स निकालकर मुझे दे दिए।"

उसके बाद पादरियों ने स्टॉरेज लॉकर खोलकर सभी को लाइफ जैकेट्स दिए। लाइफ जैकेट्स कम पड़ गए तब चारों पादरियों ने, चार घबराए हुए सिपाहियों को अपने पहने हुए लाइफ जैकेट्स उतारकर दे दिए।

जिस समय पादरियों ने लाइफ जैकेट उतारकर दिए, वास्तव में तभी उन्होंने अपना जीवन भी उन घबराए हुए सिपाहियों को अर्पण कर दिया था। वे पादरी अलग-अलग धर्म के थे लेकिन लाइफ जैकेट उतारते समय उन्होंने किसी सिपाही से उनका धर्म नहीं पूछा।

जब जहाज डूब गया तब संकट से बच गए सिपाहियों ने, लाइफ बोट में से इन चारों पादरियों को डूबते हुए जहाज पर, एक दूसरे का हाथ पकड़कर तेज आवाज़ से प्रार्थना करते हुए सुना।

मित्रों, अपने आप को सभी प्यार करते हैं और इस सब से प्यारी जान को, इन चारों पादरियों ने दूसरों के लिए अर्पण कर दिया। पादरियों के पास तो लाइफ जैकेट थे। यदि वे चाहते तो अपनी जान बचाकर भाग सकते थे। जबकि ऐसा करने के बजाय, अपनी लाइफ जैकेट्स दूसरों को देकर, उन्होंने सुपर ह्यूमन जैसा काम करके दिखाया।

इन चारों पादरियों के नाम थे - जॉर्ज फॉक्स, एलैक्ज़ेंडर गुड, जॉन वोशिंग्टन और क्लार्क पॉलिंग।

अमरीका के इतिहास में ये चारों पादरी "फोर चेप्लिन्स" के नाम से अमर हो गए।

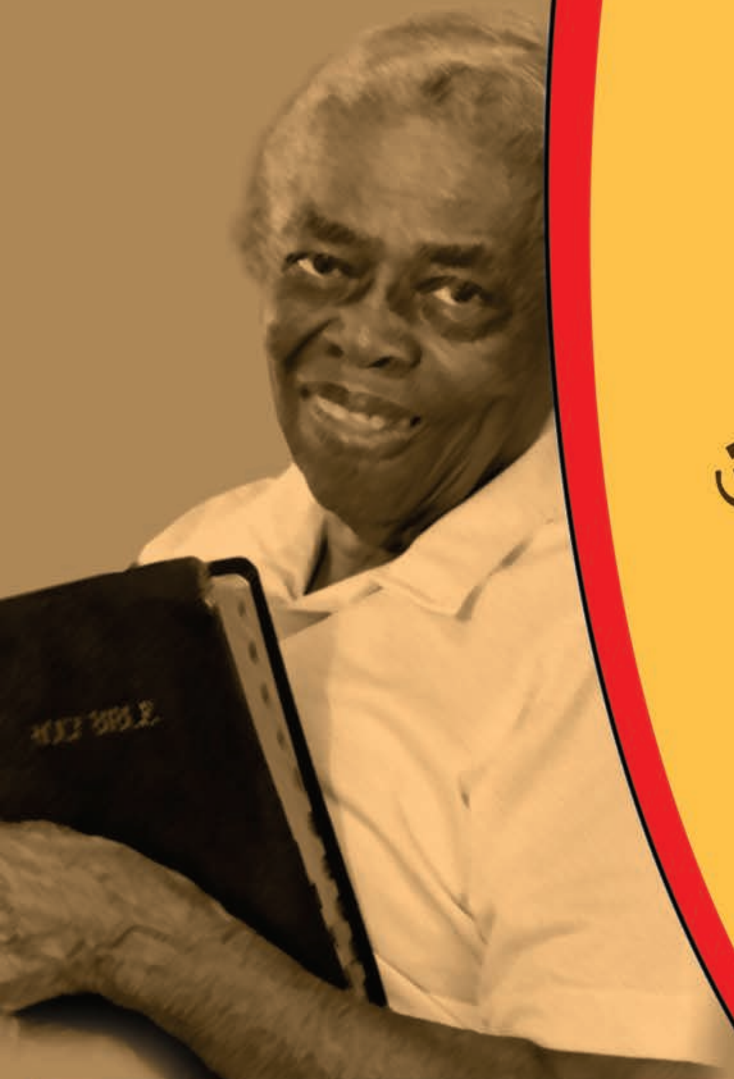

ओसीओला मेकार्टिनी

अक्रम एक्सप्रेस

यह बात ओसीओला मेकार्टिनी की है। ओसीओला एक सामान्य महिला थीं। लेकिन उनके असामान्य कार्य ने उन्हें लोगों के हृदय में स्थापित कर दिया था।

ओसीओला बचपन से ही अपनी आन्टी के साथ रहती थीं। जब वे छठी कक्षा में पढ़ती थीं, तब उनकी आन्टी की तबियत बिगड़ गई। उनकी देखभाल करने के लिए ओसीओला ने अपनी पढ़ाई छोड़ दी। उनकी आन्टी कपड़े धोने का काम करती थीं। ओसीओला ने उनका कपड़े धोने का काम संभाल लिया। उसके बाद करीब 80 *साल तक लगातार उन्होंने वही काम किया। ओसीओला के पास अपने काम के सिवाय कुछ भी नहीं था। वे बहुत ही लगन से अपना काम करतीं और काम को वरदान ही समझती थीं। उन्होंने शादी नहीं की थी।*

ओसीओला का जीवन बहुत ही सादगीपूर्ण था। अपने लिए वे कभी कोई खर्च नहीं करतीं। ज़िंदगीभर की कमाई में से बचत की। करीब 87 *साल की उम्र में, उनके बैंक अकाउन्ट में* 1,50,000 *डॉलर से भी अधिक रकम जमा हो गई थी।*

जब बैंक मैनेजर ने ओसीओला से पूछा कि इस रकम का वह क्या करना चाहती हैं, तब उन्होंने जवाब दिया कि 1,50,000 *डॉलर की रकम का दान, वे युनिवर्सिटी ऑफ सदर्न मिसीसीपी के विद्यार्थियों की स्कॉलरशिप के लिए देना चाहती हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि ओसीओला ने यह रकम अपनी मृत्यु के बाद नहीं बल्कि तुरंत ही दे देने का निर्णय किया।*

अपने निर्णय के बारे में ओसीओला ने कहा, "मेरी संपत्ति को मैं विद्यार्थियों के साथ शेयर करना चाहती हूँ। मैंने अपनी ज़िंदगी में बहुत काम किया है। लेकिन यह संपत्ति मैं विद्यार्थियों के लिए देती हूँ, जिससे उन्हें मेरी तरह मज़दूरी न करनी पड़े।"

दान के बदले में ओसीओला को कुछ भी नहीं चाहिए था। युनिवर्सिटी में उनके नाम की कोई बिल्डिंग हो या फिर उनकी मूर्ति लगाई जाए, ऐसा कुछ ओसीओला नहीं चाहती थीं। उनकी सिर्फ एक ही अभिलाषा थी कि उनकी तरफ से स्कॉलरशिप लेकर जिन विद्यार्थियों को पदवी मिले, उनमें से किसी एक विद्यार्थी को उनकी हाज़िरी में पदवी मिले।

एक जर्नलिस्ट(पत्रकार) ने ओसीओला से पूछा, "ये पैसे आपने अपने लिए क्यों नहीं इस्तेमाल किए?" तब ओसीओला ने जवाब दिया, "ये पैसे मैंने अपने लिए ही इस्तेमाल किए हैं।"

कड़ी मेहनत से इकट्ठे किए हुए पैसे वे अपने बुढापे के लिए भी खर्च कर सकती थीं लेकिन पूरी ज़िंदगी उन्होंने कभी अपने सुख-चैन का विचार ही नहीं किया। उन्होंने अपने लिए एक गाड़ी भी नहीं ली।

इस तरह, अपने सुख का विचार किए बिना, अपना धन उन्होंने विद्यार्थियों की पढ़ाई के लिए दे दिया। ऐसी नोबिलिटी का काम कोई सुपर ह्यूमन ही कर सकता है!

माता रखुबाई

बालक विनायक के घर एक गरीब लड़का रहता था। कभी घर में खाना कम पड़ जाता तो उनकी माता खुद ठंडा और बासी खाना खा लेती, कभी विनायक को भी बासी खाना खिला देती, लेकिन उस गरीब बच्चे को कभी भी ठंडा या बासी खाना नहीं देती।

इससे विनायक को आश्चर्य होता। उसने एक दिन माँ से कहा "माँ, आप कहती हो कि सभी को समान समझना चाहिए, फिर आप मुझ में और इस बच्चे में ऐसा भेदभाव क्यों करती हो? कभी-कभी मुझे बासी खाना देती हो, तो इसे क्यों नहीं देती?"

जवाब में माँ ने पुत्र को गोद में लेकर, उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, "बेटा, तेरी बात सही है। अभी मुझ में भेदभाव गया नहीं है। इसका कारण यह है कि तू मुझे पुत्र की तरह दिखता है और वह बच्चा मुझे भगवान स्वरूप दिखता है!"

कितनी अद्‌भुत है यह माँ! बचपन से ही अपने बच्चे को सभी में भगवान देखना सिखाया और अपना सुख दूसरे को दे देने के संस्कार दिए। जिस माँ का ऐसा संस्कार-सिंचन हो, उनका पुत्र भी अद्‌भुत हो तो इसमें आश्चर्य नहीं है। वह पुत्र था विश्व विख्यात संत विनोबा भावे और उनकी माता का नाम था रखुबाई।

जब विनोबा 21 साल के हुए तब उन्होंने काशी जाकर साधना करने का निश्चय किया। जब यह बात बाहर फैली, तब किसी स्त्री ने टिप्पणी की, "आज-कल के बच्चों का क्या कहना! दुःख सहन करके बड़ा करें और वे भाग जाएँ!"

तुरंत ही विनोबा की माता ने कहा, "मेरा बेटा भागा नहीं है। उसने तो अपनी साधना और लोक-कल्याण के लिए घर का त्याग किया है।" रखुबाई को ऐसी आशा नहीं थी कि बुढ़ापे में बेटा उनकी देखभाल करेगा बल्कि अपने पुत्र को स्व-कल्याण और लोक-कल्याण के लिए समर्पण करने का गौरव था! कितना अद्‌भुत दैवीय गुण! पुत्र ने भी अपनी देवी जैसी माता के समर्पण की लाज रखी। गांधी जी के यज्ञ में शामिल होकर संत विनोब भावे ने देश के उद्धार के लिए अपना पूरा जीवन समर्पित कर दिया!

मेरा जीवन ही मेरा संदेश

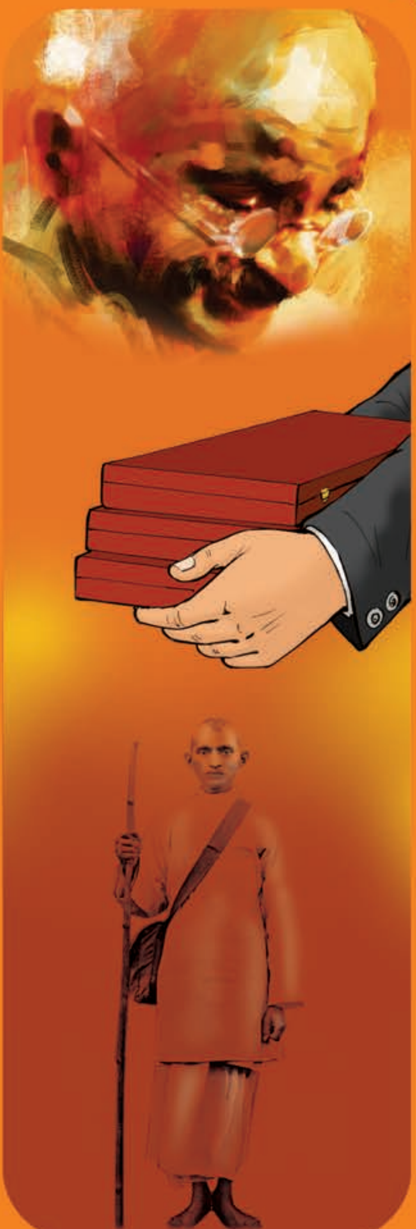

विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक आल्बर्ट आइन्स्टाइन ने गांधी जी के बारे में यह कहा था, "मुश्किल से ही आनेवाली पीढ़ी यह मानने को तैयार होगी कि हाड-मांस से बने हुए एक ऐसे व्यक्ति का पृथ्वी पर जन्म हुआ होगा।"

पोरबंदर में 2 अक्तूबर 1869 के दिन जन्म लेनेवाले मोहनदास करमचंद गांधी नामक बालक, 79 साल की उम्र में, 30 जनवरी 1948 के दिन महात्मा गांधी बनकर मृत्यु को प्राप्त हुए। गांधी जी मानव में से महामानव किस तरह बने? चलो, उनके जीवन प्रसंगों की थोड़ी झांकी देखें।

दक्षिण आफ्रीका में गांधी जी एक सफल वकील थे। लेकिन गांधी जी को अपने निजी फायदे या कीर्ति की कुछ पड़ी नहीं थी। किसी भी मुश्किल केस को वे सेवा के लिए आया हुआ मौका समझकर पूरा करते थे। उनके ऐसे व्यवहार ने दक्षिण आफ्रीका में बसे हुए भारतियों और अन्य लोगों का दिल जीत लिया।

निःस्वार्थ सेवा का आदर्श गांधी जी के जीवन में समाने लगा। धीरे-धीरे भौतिक सुख गांधी जी को अपनी सेवा के कार्यों के लिए अड़चन लगने लगे और इसलिए उन्होंने अत्यंत ही सादगीभरा जीवन अपना लिया। जैसे-जैसे गांधी जी औरों के लिए अपना समय देते गए, वैसे-वैसे उनका आनंद और मुक्तता बढ़ने लगी। सेवा के कार्यों के लिए साउथ आफ्रीका में उन्होंने एक आश्रम की स्थापना की।

गांधी जी की सेवा से प्रभावित होकर, एक बार वहाँ रहनेवाले कुछ भारतियों ने गांधी जी को कीमती सोने-चांदी की भेंट-सौगातें भेजी। इन भेंट-सौगातें में कस्तूर-बा के लिए एक हीरों का हार भी था।

अपनी सेवा के बदले में जिसे कोई भी अपेक्षा न हो, वह ऐसे भेंट-सौगातें कैसे स्वीकार करे? दूसरे दिन गांधी जी ने उन भेंटों को, लोक कल्याण के कार्यों के लिए ट्रस्ट को सौंप दिया। इस तरह, साउथ आफ्रीका में गांधी जी के जीवन में निःस्वार्थ सेवा के बीज बोए जा चुके थे।

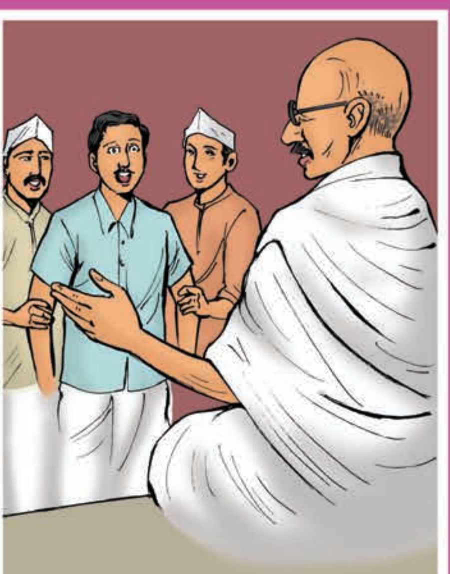

भारत वापस आने पर गांधी जी ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम शुरू किया। एक बार एक विदेशी पत्रकार ने गांधी जी से पूछा, "मिस्टर गांधी, पिछले 50 साल से आप रोज़ दिन के 15 घंटे काम करते हो। आपको ऐसा नहीं लगता कि आपको कुछ दिन छुट्टियों पर जाना चाहिए?"

गांधी जी ने जवाब दिया, "क्यों? मैं तो रोज़ वेकेशन पर ही होता हूँ।" इस तरह गांधी जी अपने कार्यों को बोझ नहीं समझते थे, क्योंकि उन्हें अपने कार्यों के बदले में किसी मान या कीर्ति की कोई अपेक्षा ही नहीं थी। निःस्वार्थ भाव से वे अपना कार्य किए जा रहे थे।

दूसरों के लिए जीवन व्यतीत करने की आदर्श भावना के कारण, 70 साल की उम्र में भी गांधी जी की कार्यक्षमता युवकों से अनेक गुना ज्यादा हो गई थी।

गांधी जी में और भी एक अद्‌भुत गुण था - अपकार का बदला उपकार।

गांधी जी ने अपनी आत्मकथा, "सत्य के प्रयोगों" में लिखा है: "अपकार का बदला अपकार नहीं बल्कि उपकार ही हो सकता है" यह

वाक्य मेरी ज़िंदगी का सूत्र बन गया। अपकारी का भला सोचना और करना ही मेरे जीवन का हिस्सा बन गया था।

उन्होंने उसके अनेक प्रयोग किए।

आफ्रीका में खुद पर हमला करनेवाले मीर आलम को क्षमा करके उस पर केस नहीं करना चाहिए, ऐसा निर्णय उन्होंने किया था।

उनकी मृत्यु से थोड़े दिन पहले ही प्रार्थना सभा के नज़दीक बम फोड़नेवाले के प्रति भी उन्होंने सिर्फ प्रेम के ही वचन कहे थे।

एक दिन आश्रम के रसोईघर में रात को कोई चोर घुस गया। कुछ आश्रमवासियों ने उसे पकड़ लिया और एक कोठरी में बंद कर दिया। सुबह उसे गांधी जी के सामने ले जाने का निर्णय किया।

सुबह अपना नित्यक्रम पूरा करने के बाद गांधी जी नाश्ता करने बैठे। तब उस चोर को उनके सामने लाया गया। किस तरह चोर पकड़ा गया वह सब गांधी जी को बताया गया। गांधी जी शांति से सबकुछ सुन रहे थे। फिर शांति से पूछा "इसे नाश्ता करवाया?"

आश्रमवासी : "नहीं, बापू!"

"अरे! चोर को नाश्ता!" नज़दीक खड़े हुए कुछ व्यक्ति बड़बड़ाए। चोर को नाश्ता करवाया गया। उसके बाद फिर से उसे गांधी जी के पास लाया गया। गांधी जी ने उसे प्रेमपूर्वक समझाया, "भाई, इस तरह तुम्हें चोरी नहीं करनी चाहिए। गरीबी की वजह से चोरी करनी पड़ती हो तो हम आश्रम में तुम्हें काम देंगे।"

अंत में चोर को पुलिस के हवाले करने की बजाय गांधी जी ने उसे छोड़ देने का आदेश दिया। तब चोर को आश्चर्य हुआ! ऐसे थे अपने गांधी बापू।

एक दिन गांधी जी की ट्रेन स्टेशन से गुज़र रही थी, तब एक रिपॉर्टर हाँफते-हाँफते गांधी जी के पास आया और गांधी जी से देश वासियों के लिए एक संदेश देने के लिए कहा। गांधी जी ने एक कागज़ के टुकड़े पर लिख दिया, "मेरा जीवन ही मेरा संदेश।"

अपकार का बदला उपकार

"कल बदरी की वजह से मेरी बेटी की शादी अच्छी तरह से हो गई। उसने जैसी मेहनत की है वैसी मेहनत तो कोई सगे-संबंधी भी नहीं करते। जैसे खुद की ही बेटी की शादी हो, ऐसे आनंद-उत्साह से काम कर रहा था।" गाँव की चौपाल में बैठकर सुखीराम अपने दोस्तों के साथ बातचीत कर रहे थे।

"सही कह रहे हो। शादी हो या बीमारी, बदरी हमेशा सब के लिए हाज़िर ही होता है!" सुखीराम की बात से सभी दोस्त सहमत थे। और होंगे भी क्यों नहीं? बदरी जैसा परोपकारी व्यक्ति गाँव में मिलना मुश्किल था। गाँव में किसी को कैसी भी मदद की ज़रूरत हो तो उसे सब से पहले बदरी ही याद आता।

बदरी अपनी पत्नी और दो बच्चों के साथ एक झोंपड़ी में रहता था। मेहनत करके खेती करता और अपने परिवार के पालन-पोषण के लिए पर्याप्त धन कमाता।

माधव के सिवाय गाँव में सभी बदरी को चाहते थे। माधव बदरी का पड़ोसी था। व्यवसाय से वह भी बदरी की तरह किसान था, लेकिन स्वभाव से बहुत आलसी। इसलिए उसकी खेती ठीक से नहीं हो पाती थी। हर साल फसल तैयार होने पर बदरी को अच्छी कमाई होती जबकि माधव बड़ी मुश्किल से अपने परिवार की ज़रूरतें पूरी कर पाता था। बदरी की कमाई देखकर माधव को बहुत ईर्ष्या होती। किस तरह बदरी को मैं गिराऊँ इसी सोच में रहता।

लेकिन बदरी को अपने पड़ोसी के प्रति उतना ही भाव था, जितना कि अन्य सभी गाँववासियों के लिए। माधव की फसल अच्छी नहीं होती, इसलिए हर साल बदरी अपनी फसल में से थोड़ा भाग माधव के घर भिजवाता, इतना ही नहीं, बल्कि वह अपने बच्चों के पढ़ने के लिए जो अच्छी-अच्छी किताबें लाता, वो माधव के बच्चों को भी देता। घर में कुछ अच्छा व्यंजन बनता, तो माधव के घर ज़रूर भिजवाता।

इतना सब करने पर भी जब बदरी का छोटा सा भी काम करना हो तो माधव मुँह मोड़ लेता। लेकिन बदरी को माधव का व्यवहार कभी भी बुरा नहीं लगता।

एक दिन शाम को आँगन में बैठकर माधव के बच्चे मज़ेदार मिठाई खा रहे थे। "ए मोहनिया, ये मिठाई कहाँ से आई?" माधव ने पूछा।

"बापू, बदरी चाचा लाए हैं। गोपाल भाई को शहर के बहुत अच्छे स्कूल में दाखिला मिल गया है। उसकी खुशी में बदरी चाचा यह मिठाई का डिब्बा दे गए हैं," मिठाई का टुकड़ा मुँह में रखते हुए मोहन ने जवाब दिया।

शहर के एक अच्छे स्कूल में बेटे के दाखिले की खुशी में बदरी ने पूरे गाँव में मिठाई बाँटी। माधव को बदरी की यह खुशी अच्छी नहीं लगी।

"मैं देखता हूँ कि वह कैसे अपने बेटे को शहर के स्कूल में भेजता है," ईर्ष्या की अग्नि में जल रहे माधव ने सोचा और उस रात माधव ने निंदनीय कार्य कर दिया। किसी को भनक न लगे इस तरह उसने बदरी के खेत में आग लगा दी।

संयोगवश उसी समय सुखीराम वहाँ से निकल रहा था। उसने फटाफट बदरी को जगाया। सभी गाँववालों ने मिलकर आग बुझा दी। आग तो बुझ गई, लेकिन साथ ही साथ बदरी का स्वप्न भी बुझ गया। पुत्र की फीस के लिए फसल बेचकर पैसा इकट्ठा करना था। उस साल बदरी अपने बेटे को शहर के स्कूल में नहीं भेज पाया।

"बदरी, मैं सच कहता हूँ। माधव ने ही तुम्हारे खेत में आग लगाई थी। उस रात मैंने उसे तुम्हारे खेत से बाहर निकलते हुए देखा था। हम पंचायत में उसकी शिकायत करेंगे। उसे सज़ा दिलवानी है।" सुखीराम ने बदरी से कहा। लेकिन बदरी ने साफ मना कर दिया। इसके साथ ही उसने सुखीराम से वचन भी माँगा कि वह किसी को यह बात नहीं बताए।

इस घटना के बाद बदरी बहुत गुमसुम रहने लगा। गाँव के लोगों के साथ उसने मिलना-जुलना कम कर दिया था। अचानक एक रात उसे माधव के घर से रोने की आवाज़ सुनाई दी। बाहर निकलकर देखा तो माधव की झोंपड़ी के बाहर बहुत भीड़ जमा हो गई थी।

"क्या हुआ भाई?" बदरी ने पूछा।

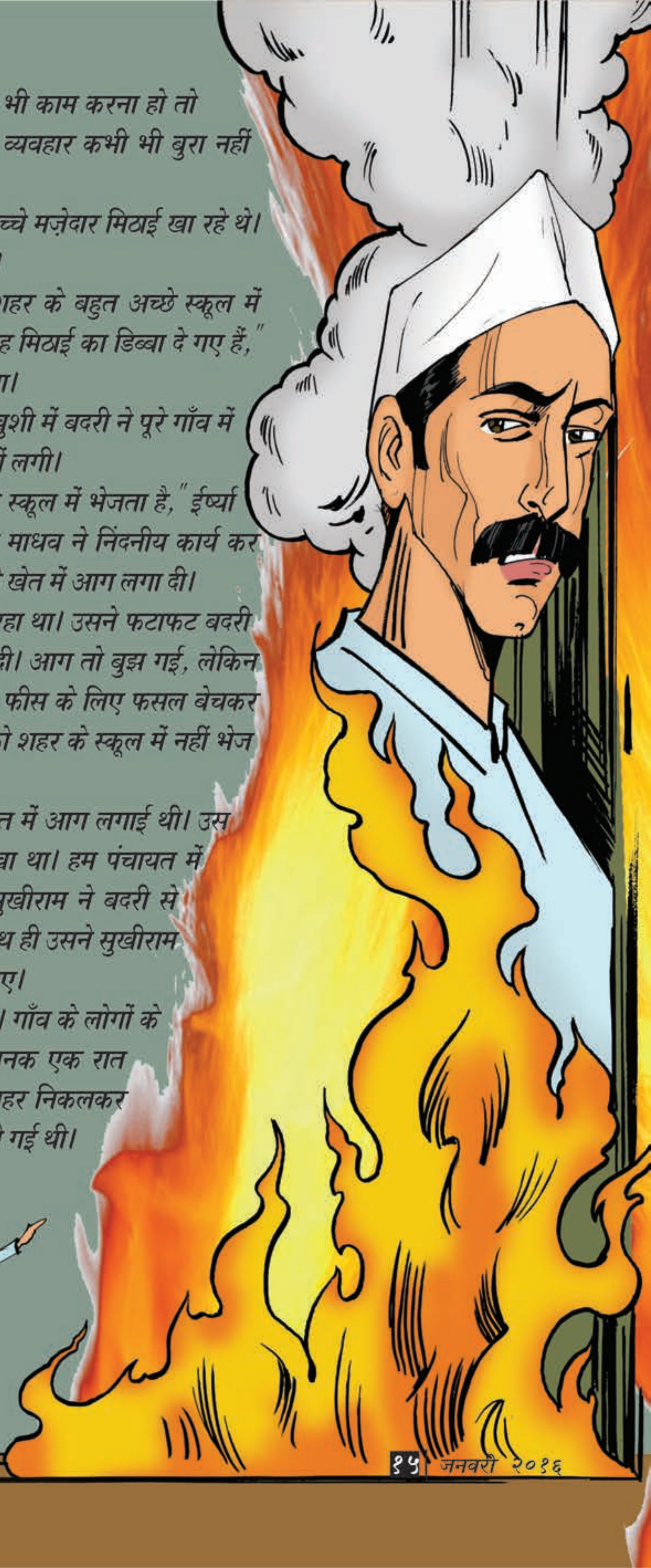

"माधव के बेटे मोहन की स्थिति बहुत ही गंभीर है। गाँव के वैद्य के पास मोहन की बीमारी का कोई इलाज नहीं है।"

एक पल की भी देरी किए बिना, दस मील दूर शहर से बदरी एक पहचानवाले डॉक्टर को ले आया। डॉक्टर ने तुरंत ही इलाज शुरू कर दिया। थोड़े ही घंटों में मोहन की स्थिति में सुधार होने लगा।

माधव की खुशी का पार नहीं था। बदरी का वह जितना आभार माने उतना कम था। लेकिन, खुद ने जो किया था, उसके बाद बदरी का सामना करना उसके लिए बहुत मुश्किल था। हिम्मत करके वह बदरी की झोंपड़ी में गया।

"माधव, आओ भाई। मोहन ठीक है न अब?" आँगन में बैठे हुए बदरी ने माधव का स्वागत किया।

"हाँ, बहुत अच्छा है। कल यदि तुम ठीक समय पर डॉक्टर को नहीं लाए होते तो..." इतना कहते ही माधव की आँखें भर आईं।

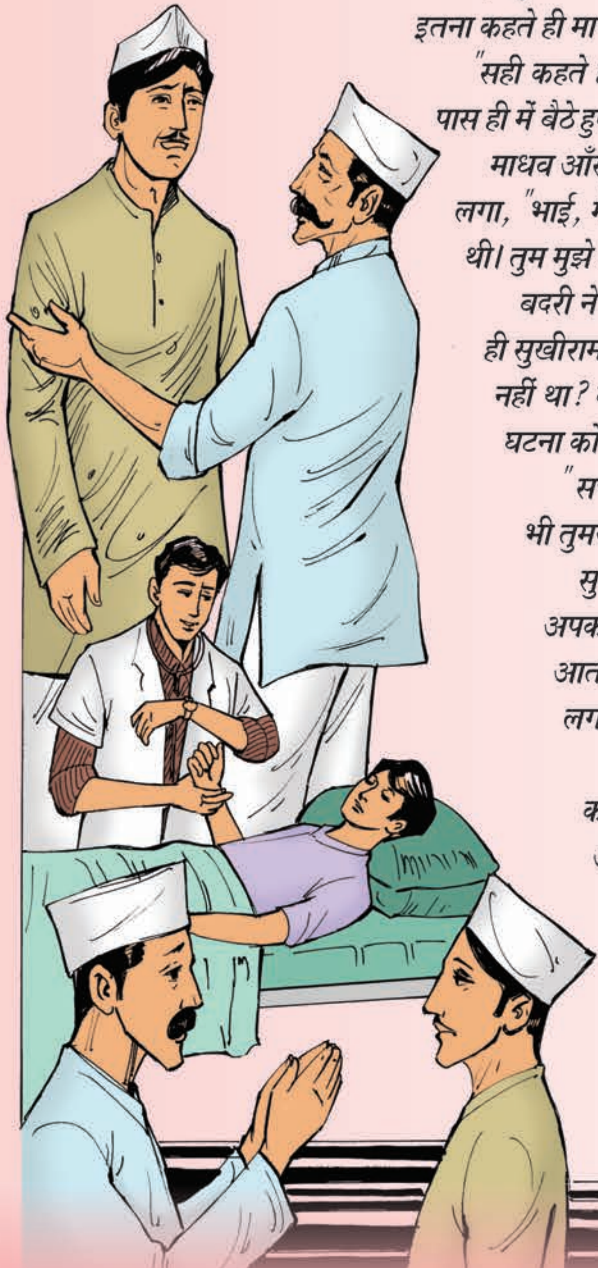

"सही कहते हो माधव, तुम तो बदरी का जितना उपकार मानो उतना कम है।" पास ही में बैठे हुए सुखीराम ने माधव से कहा।

माधव आँसू पोंछकर थोड़ा सहज हुआ। फिर दोनों हाथ जोड़कर बदरी से कहने लगा, "भाई, मैं तुम्हारा गुनहगार हूँ। उस दिन तुम्हारे खेत में मैंने ही आग लगाई थी। तुम मुझे जो सज़ा दोगे उसे मैं भुगतने के लिए तैयार हूँ।"

बदरी ने माधव का हाथ अपने हाथ में ले लिया। बदरी कुछ कहे उससे पहले ही सुखीराम बोल उठा, "तुम्हें क्या लगता है माधव, बदरी को इस बात का पता नहीं था? बदरी जानता था कि ऐसा भयंकर कुकर्म तुमने ही किया था।" उस घटना को याद करके सुखीराम का खून खौलने लगा।

"सचमुच?" माधव की आँखों में फिर से आँसू आ गए, "इसके बावजूद भी तुमने मेरे बेटे की जान बचाई?"

सुखीराम थोड़ा शांत हुआ और बोला, "चाहे कोई कितना भी अपकार करे, लेकिन उसके बदले में बदरी को तो सिर्फ उपकार करना ही आता है। यही तो बदरी की खासियत है न!" और माधव बदरी के गले लग गया।

भयंकर अपकार का बदला भी बदरी ने उपकार से दिया, इस बात का माधव पर गहरा असर हुआ। उस दिन से माधव में बहुत बदलाव आ गया।

जब लोग उसके बदलाव का कारण पूछते तब वह कहता, "बदरी की सरलता और प्रेम ने मुझे जीत लिया!"

मीठी यादें

दादाजी के समय की बात है। एक सत्संग कार्यक्रम के लिए एक गाँव के करीब पच्चीस महात्माओं को दूसरे गाँव जाना था। सभी का बुकिंग करवाने की ज़िम्मेदारी नीरू माँ की थी। जब नाम लिखवाए तब कुछ महात्माओं ने टिकट के पैसे नहीं दिए।

संयोगवश कुछ महात्माओं को सत्संग में जाना रद्द करना पड़ा। नीरू माँ ने वो सभी टिकट कैन्सल करवा दीं। लेकिन कैन्सल करवानेवाले महात्माओं को यह ध्यान में नहीं आया कि वे टिकट कैन्सल करवाते समय कटे हुए पैसे नीरू माँ को दे दें।

नीरू माँ की खानदानी भी इतनी ज़बरदस्त थीं कि उन्होंने किसी महात्मा से कैन्सलेशन फी माँगी भी नहीं, उन्होंने उन महात्माओं को कभी इस बात का पता भी नहीं चलने दिया!

दादाजी हमेशा कहते थे कि "खानदानी तो देने में भी खोए और लेने में भी खोए।"

नीरू माँ ऐसी ही खानदानी का जीवंत उदाहरण थे।

पूना में भव्यतापूर्वक मनाई गई दादाजी की १०८वीं जन्मजयंती महोत्सव की झलक

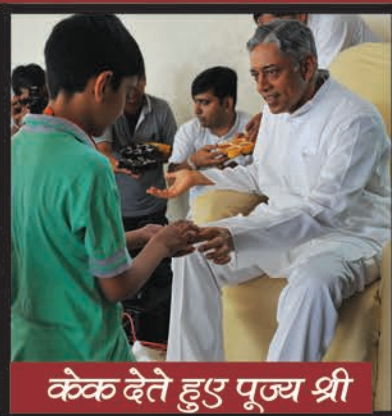

केक देते हुए पूज्य श्री

कल्चरल पर्फोर्मेन्स

बच्चों को कैडबरी देते हुए पूज्य श्री

जादुई चश्मा

बालविज्ञान बुक्स ओपनिंग

चिल्ड्रन पार्क

विविध स्कूलों के बच्चे

आग बबूला

अनुभव बताती हुई बालिका

Akram Express

January 2016
Year : 3, Issue : 10
Conti. Issue No.: 34

BALVIGNAN
Fun 'n' Gnan with Dada

Date of Publication On 8th Of Every Month
RNI No.GUJHIN/2013/53111
Postal Reg. No. G- GNR-306/14-16
valid up To 31-12-2016
LPWP Licence No. CPMG/GJ/119/2014
valid up To 31-12-2016
Posted at Adalaj Post Office
on 08th of every month

और अंत में...

एक बार एक व्यक्ति ग्रीस देश के बड़े तत्वज्ञानी डायोजिनीस को यह बताने के लिए कि वह खुद कितना बड़ा आदमी है, उनके पास आकर डींग हांकते हुए कहने लगा "आप तो क्या, आप से भी कई बड़े-बड़े विद्वानों से में मिला हूँ, उनके साथ तत्वज्ञान की कितनी ही बातचीत की है।"

डायोजिनीस ने शांत स्वर में कहा, "अच्छा! मैंने भी दुनिया के कई धनवान देखे हैं, उनसे मिला भी हूँ, उनसे बहुत बातचीत भी की है, लेकिन ऐसा करने से मैं धनवान नहीं बन गया!"

अक्रम एक्सप्रेस के सदस्यों के लिए सूचना

१. आपकी वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है उसका पता कैसे चलेगा? यदि आपकी इस महीने में आई हुई अक्रम एक्सप्रेस के कवर के लेबल पर लगे हुए मेम्बरशीप नं. के बाद # हो तो यह आपकी अंतिम अक्रम एक्सप्रेस है। उदा. **AGIA4313#** और यदि लेबल पर मेम्बरशीप नं. के बाद ## हो तो अगले महीने में आपकी सदस्यता समाप्त होगी। उदा. **AGIA4313##** अक्रम एक्सप्रेस रिन्यूअल की जानकारी संपादकीय पेज पर दी गई है।

२. यदि किसी महीने का अक्रम एक्सप्रेस आपको नहीं मिला हो तो नीचे दी गई माहिती फोन नं. ८९५५००७५०० पर **SMS** करें।

१. कच्ची पावती नंबर या **ID No.**, २. पूरा ऐड्रेस पिन कोड के साथ, ३. जिस महीने का मैगज़ीन नहीं मिला हो, उस महीने का नाम।

Publisher, Printer & Editor - Mr. Dimplebhai Mehta on behaif of Mahavideh Foundation
Printed at **Amba offset** :- Parshwanath Chembers, Usmanpura, Ahmedabad - 14 and published